ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 200-201

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

गॉधी का आत्म–ईश्वरवाद

कृष्ण मुरारी
सहायक प्रोफेसर– दर्शनशास्त्र, कतरास महाविद्यालय,कतरासगढ़, धनबाद (बिहार), भारत

Received- 08.08.2020, Revised- 11.08.2020, Accepted - 13.08.2020 E-mail: - dr.ramanyadav@gmail.com

सारांश : *महात्मा गांधी मनु और याज्ञवल्क्य की तरह स्मृतिकार और महात्मा बुद्ध और ईसा की तरह पैगम्बर थे, जिन्होने कर्तव्य और अकर्तव्य, धर्म और अधर्म के सम्बन्ध में अज्ञानी और दिग्भ्रांत मानव को एक नई रोशनी प्रदान की । इसीलिए गांधी को युग–पुरूष' माना जाता है । गांधी ने अपनी रचनात्मक बुद्धि से पुरब और पश्चिम के नैतिक विचारों के दिव्य अंषो का समन्वय किया और हिन्दु धर्म पर आधारित नीति–धर्म को नये परिवेश में उसकी पुनर्व्याख्या प्रस्तुत कर उसे वैज्ञानिक,मानवतावादी और वस्तुवादी रूप में प्रस्तुत किया । अतः एक ओर रस्किन का अनटूदिस लास्ट, थूरो का सिविल डिस आबिडिएन्स, बाइबिल का "सरमन आन दी माउन्ट" तथा टालस्टाय का ब्रेडलेबर ने उन्हे प्रभावित किया,तो दूसरी ओर हिन्दु संस्कृति की अध्यात्मिक परम्परा,अहिंसा का विशाल वाड्मय और गीता का निष्काम कर्मयोग से उन्हे प्रेरणा मिली ।*

कुंजीभूत शब्द– पैगम्बर, अकर्तव्य, धर्म, अधर्म, दिग्भ्रांत, रोशनी प्रदान, रचनात्मक, परिवेश, नैतिक विचारों ।

कार्ल मार्क्स के साधन–साध्य के द्वैत और शुभ लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हिंसा या खूनी क्रांति की नीति उन्हे पसन्द नहीं आयी तथा अपने अनुभव से इस पर चिंतन करना आरम्भ किया। इन परिस्थितियों का लाभ उठाकर गांधी ने सार्वभौम नैतिकता के सिद्धांत की स्थापना की । धर्म और नीति के बिच बढती हुई खाई को पाटकर उन्होने नीति को धर्म का साधक और धर्म को नीति का आधार मानकर इन दोनो में अदभूत समन्वय किया । इस व्यापक समन्वय की नीति के परिणामस्वरूप जो नीति धर्म का रूप गांधी ने हमारे समक्ष प्रस्तुत किया,उसे आर्नेनैस ने "आत्मानुभव के लिए की गयी खोज", "हिंसा से आत्मानुभव असंभव" और "साधन–साध्य के निर्धारक"सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत किया है ।[2] तथा विनोबा ने उसे "साधन–शुद्धि के विचार", "आध्यात्मिक साधना और समाज सेवा का संगम" तथा किसी साधन का सामुहिक अनुष्ठान के रूप में देखा है ।[3]

गांधी जी के चिन्तन का केन्द्र बिन्दु ईश्वर–प्रत्यय रहा है। शेष तत्व इसी केन्द्र के चतुर्दिक विद्यमान थे । यद्यपि गांधी जी का जिज्ञासु मन,विभिन्न स्त्रोंतो से प्राप्त, ईष्वर–सम्बन्धी विचारों को अपने में आत्मसात् करने का प्रयास करता था, किन्तु ईश्वर के प्रति उनकी अपनी आस्था अपने वैष्णव परिवार से प्राप्त हुई और दृढ़ भी हुई।

इस प्रकार यद्यपि गांधी जी ईश्वर–भक्त थे तथापि ईश्वर के नाम पर किसी अमूर्त और निरोकार सत्ता के प्रति कोई आकर्षण नहीं था । वे तो बार – बार यही कहते थे– "ईश्वर हमारे अन्तः करण में है और वह हमेशा इसको प्रभावित करता रहता है ।" ईष्वर को जीवन में स्वीकार करने को ही धर्म कहते है। ईश्वर को स्वीकार करने का अर्थ है कि हम अपने ह्रदय में सत्ता, प्रेम और विवेक को अधिक से अधिक स्थान देकर अपनी संकीर्णता, विद्वेष–भावना, अज्ञान और अविवेक तथा इनसे उत्पन्न होने वाले क्रोध, लोभ और काम आदि सारे मनोवेगों का परित्याग कर दें। इसलिए उनके लिए "धर्म का सच्चा सार नैतिकता मे निहित है ।" "सच्ची नैतिकता और सच्चा धर्म एक दूसरे के साथ अविच्छेद रूप से बंधे हुए है ।" फिर भी नैतिकता के लिए धर्म का वही स्थान है जो जमीन में बीज उगाने के लिए जल का होता है ।" इस प्रकार यद्यपि बिना धर्म के भी नैतिकता संभव है किन्तु नैतिकता के विकास के लिए यह अत्यंत आवश्यक है । दूसरी तरफ, नैतिकता भी धर्म के लिए सहायिका होती है । इससे हमारे ह्रदय का विकास और कलुश दूर होतें है,जिससे हमें अपने अन्तः करण में या दूसरे व्यक्ति के ह्रदय में उस परमपिता परमात्मा की अनुभूति करने में कोई भी बाधा नहीं होती । "जितना ही हम शुद्ध होने का प्रयास करते है,हम उतना ही अधिक ईश्वर के समीप आते है ।" इस प्रकार नैतिकता और धर्म परस्पर सहायक हैं ।

गांधी जी के अनुसार मानवता की सेवा ही ईश्वर–भक्ति है । यही कारण है किवे कभी – कभी कह उठते थे कि 'मैं अपने को अवष्य ही शून्य में विलीन कर दूँगा ।' वे भगवान की प्रेरणा समझकर ही अपने सभी सफल और असफल कर्मों को निश्काम भाव से ईश्वरार्पण कर देते थे । इसीलिए वे विजय के उन्माद और पराजय की निराशा से बचते रहे,किन्तु अपने कर्म के फल से प्रायः

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

प्रसन्न ही होते थे । इसे वे परमात्मा का प्रसाद समझते हुए अपने को कृतार्थ अनुभव करते थे । गांधी जी की भगवत्–साधना का यही रूप था ।

गांधीजी का मत है कि धर्म व्यक्तिगत साधना और जीवन दर्शन के रूप में आता है । प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए अपना धर्म चुन लेने के लिए स्वतंत्र है । गांधी जी स्वयं हरिजन में लिखा है,"धर्म एक अत्यंत वैयक्तिक वस्तु है । हमे दूसरों के जीवन की श्रेष्ठ बातों का अधिकाधिक लाभ लेते हुए अपने आदर्षों के अनुसार जीवन–यापन करने का प्रयास करना चहिए । इस प्रकार हम ईश्वर–प्राप्ति को अध्यात्मिक साधना को भी अधिक समृद्ध करेंगे ।"[4]

गांधी जी सभी धर्मों को समान मानते थे । उन्होने स्वयं कहा है, "सभी धर्म मेरे लिए अपने हिन्दु धर्म के समान ही प्रिय है, क्योंकि सभी मानव आपस में भाई–भाई है । इसलिए मुझे दूसरे धर्मो के प्रति भी वहीं आदर–भाव है,जो मुझे अपने धर्म के प्रति है, इसलिए मेरे सामने धर्म परिवर्तन का प्रश्न ही नहीं उठता । धार्मिक भ्रातृत्व का यही उद्धेश्य होना चहिए कि किस प्रकार एक हिन्दु को अच्छा और आदर्श हिन्दू तथा एक मुसलमान और एक ईसाई को अच्छा मुसलमान और ईसाई बनाया जाय ।..... भगवान से दूसरो के लिए हम यह प्रार्थना नहीं करे, हे भगवान ! जैसा तुमने मुझे पथ दिखाया है वैसा ही उसको दिखाओ 'बल्कि हम यह कहें,'भगवान ! उसके समर्पण और सर्वतोमुखी विकास के लिए आवश्यक प्रेरणा और प्रकाष दो । हम केवल इतनी ही प्रार्थना करें कि चाहे जिसका जो भी धर्म हो,उसको उसी से श्रम और सुख मिले ।[5]

समुद्देश्यों से प्रेरित जब कुछ ईसाई धर्म–प्रचारकों को जो भारतवासियों को ईसाई धर्म में दीक्षित करने के लिए अत्यन्त थे, बिना ह्रदय परिवर्तन के धर्म–परिवर्तन व्यर्थ है । अनेकानेक मठ, समप्रदाय, संघर्ष, विद्वेष, धर्माधिकार और वर्ण–भेद आदि से जिस ईसाई धर्म का इतिहास भरा पडा हुआ है, उससे गांधी को भला क्या प्रेरणा मिलती ? और सबसे अधिक तो ईसाई –राष्ट्रों द्वारा आधुनिक युग में एक के बाद एक युद्ध के आतंक की पुनरावृति और उसमें ईसाई धर्मपीठों तथा धर्म–गुरूओं का अपने ही ईसाई धर्म–बान्धवों में एक दूसरे का पक्ष लेत उन्हे उत्साहित करना सचमुच गांधी जी के लिए मृत्यु से भी अधिक बोझिल बातें थीं । इसलिए उन्होने धर्मोपदेशकों को सम्बोधित करते हुए कहा है "अच्छा हो, हम उपदेश देना बंद करें और आचरण करना सिखें ।"

सभी धर्म प्रवर्तकों और आचार्यों के प्रति उन्हे आदर भाव था । उनके अनुसार वे सभी ईष्वर के द्वारा भेजे गये दिव्य दूत थे । इसलिए उन्होने कभी उनकी पौराणिकता या ऐतिहासिकता पर ध्यान नहीं दिया । इसी प्रकार वे राम, कृष्ण एवं ईसामसीह क विषय में सोचते थे । उन्होने यंग इण्डिया में लिखा है–"भगवान केवल 1100 वर्ष पूर्व ही षूली पर नहीं चढे बल्कि वे बराबर और यहॉ तक कि आज भी शूली पर चढ रहें है । सचमुच, सम्पूर्ण दुनिया और मानवता के लिए यह महान दुर्भाग्य का विषय होगा यदि हम ऐसे–ऐसे ईश्वर की कल्पना पर निर्भर रहें,जिनका तिरोभाव आज से दो हजार वर्ष पूर्व हो चुका है । इसलिए किसी ऐतिहासिक ईश्वर के बदले हमें ऐसे ईश्वर की कल्पना करनी चाहिए, जो आज भी हमारे – आप के भीतर विद्यमान है ।"[6]

इस प्रकार गांधी जी धर्म में जीवन–पूर्णता की अनुभूति करते थे । वे धर्म के द्वारा जीवन को पूर्ण मानवतावादी बनाना चाहते थे । इसी भावना से उन्होने धर्म एकता सिद्धांत की स्थापना किया । चूँकि सभी धर्म एक समान है । सबका लक्ष्य एक है ।सबका प्रेरक परमेश्वर है । वह सबकी आत्मा में वासित है ।यह जीव उसी का अंश है । इसलिए सभी जीवों में ऐक्य निश्चित है । इस संदर्भ में उनकी उक्ति है–"आदम खुदा नहीं, लेकिन खुदा के नुर से आदम जुदा नहीं ।"

यद्यपि गांधी जी हिन्दु धर्म को सर्वश्रेष्ठ मानते थे पर उनके अन्दर किसी प्रकार की धार्मिक कटट्रता नहीं थी । वे सभी धर्मों का समान रूप से आदर करते थे । उनके लिए राम–रहिम,कृष्ण–करिम,कावा–कैलाश और कुरान–पुराण सब एक है । उन्होने लिखा है कि–"मैं वेदों के एक मात्र ईश्वर में विश्वास नहीं करता । मेरा विश्वास है कि बाइबिल,कुरान जेन्द–अवेस्ता में उतनी ही ईश्वरीय प्रेरणा है

जितनी कि वेंदो में पायी जाती है ।" इस प्रकार गांधी जी का विशवास था कि ईष्वर तक पहुॅचने के कई मार्ग हो सकते है और विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों का परस्पर विवाद व्यर्थ है ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. उपरिक्त पृ0 7.
2. Naess, Arne,Gandhi and the Nuclear । हम
3. विनोबा –चिन्तन (अंक 32.33ए से0 अ0 1968) पृ0 442.
4. हरिजन, 28 दिसम्बर,1968.
5. उद्धृत– महात्मा गॉधी का दर्षन पृ0 36.
6. यंग इण्डिया, 11 अगस्त 1927.

*****

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*